श्रीकाशीनाथ-विरचित

लग्नजातक

भाषाटीकासहित

अनुवादक

पटियालाराज्यान्तर्गतबसईग्रामनिवासी

पं० खूबचन्द शर्मा

प्रकाशक

तेजकुमार बुकडिपो (प्रा०) लि०, लखनऊ

उत्तराधिकारी—

नवलकिशोर बुकडिपो, लखनऊ

तृतीयावृत्ति २०००]   सन् १९६४ ई०   [मूल्य ७)५० पै०

श्रीकाशीनाथ विरचित

लग्नजातक

भाषाटीकासहित

अनुवादक

पटियालाराज्यान्तर्गतबसईग्रामनिवासी

पं० खूबचन्द शर्मा

श्रीमती कमला भार्गव द्वारा

तेजकुमार-प्रेस (प्रा०) लि०, लखनऊ में मुद्रित व प्रकाशित ।

उत्तराधिकारी—

नवलकिशोर-प्रेस, बुकडिपो (प्रा०) लि०, लखनऊ

तृतीयावृत्ति] सन् १९६४ ई० [मूल्य ७)५०

वक्तव्य।

—:०:—

ज्योतिषशास्त्र सर्वशास्त्रों में शिरोमणि माना जाता है। क्योंकि ज्योतिषशास्त्र नेत्रस्थानापन्न होने से इसके बिना मनुष्य शुभाशुभ जानने में अन्धे के तुल्य होता है। यही एक ऐसा शास्त्र है जिसके सम्यक् ज्ञान से मनुष्य भूत, भविष्य और वर्तमानकाल की बातों को जान लेता है। किन्तु आजकल सब यही कहते सुनाई देते हैं कि ज्योतिष की बातें यथार्थ नहीं मिलती हैं। इसका कारण तो वे समझते नहीं, किन्तु शास्त्र को दोष देने लग जाते हैं। ज्योतिषशास्त्र में जन्मकालिक इष्ट मुख्य वस्तु है। यदि इष्ट ठीक है, तो अवश्य ज्योतिषशास्त्र का फल सच्चा और माननीय होता है। जहाँ इष्ट ही ठीक नहीं है वहाँ सच्चा फल कहाँ? आजकल प्रायः पुरोहित पाधा आदि कुछ थोड़ी सी हिन्दी पढ़कर नवग्रहादि के मंत्र कण्ठस्थ कर तथा होड़ाचक्र पढ़कर ही पंडित बन बैठते हैं और अशुद्ध कुंडलियाँ बनाकर उपर्युक्त कहावत चरितार्थ करते हैं और ज्योतिषशास्त्र पर से लोगों की श्रद्धा हटा देते हैं। यही सोचकर यन्त्रालयाधीश श्रीमान् मुंशी विष्णुनारायण भार्गव ने इस लग्नजातक की भाषा-टीका छपवाकर प्रकाशित करने की आज्ञा दी। उनकी आज्ञानुसार श्रीमान् बाबू हरीरामजी भार्गव 'मैनेजर बुकडिपो' ने

मुझे इसकी भाषाटीका बनाने की यह अनुमति दी कि ऐसी भाषा बनाई जावे जिससे सर्वसाधारण इसको समझकर इसके अनुसार इष्टकाल को ठीक कर सकें। इसमें बालक के जन्म-समय की जितनी जानने की बातें हैं उन सबका जानना, लग्न और ग्रहों के द्वारा बताया गया है। जो इसको कंठस्थ कर लेंगे वे इसके द्वारा प्रसूता के वृत्तान्त—किस ओर शिर था, खाट कैसी थी, दीपक कहाँ था, उसमें तेल और बत्ती कितनी थी आदि बातें—जानकर लग्न को पूर्णतया निश्चित कर सकेंगे। यदि बताये हुए इष्ट पर ये बातें न मिलें तो समझना चाहिए इष्टकाल और लग्न अशुद्ध हैं। अतः उसे लक्षणानुसार घटा बढ़ाकर ठीक कर लेना चाहिए। इस लग्नजातक में ज्ञातव्य बातें सब सम्मिलित की गई हैं। आशा है, इससे सर्वसाधारण को विशेष लाभ होगा।

संशोधन-विभाग नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ
७—८—३०

खूबचन्द शर्मा गौड़

श्रीगणेशाय नमः।

लग्नजातक

भाषाटीकासहित।

श्रीगणपति मङ्गलकरन, बिघनहरन सुखमूल।
खूबचन्द पर करि दया, रहो सदा अनुकूल॥
लोकप ब्रह्मा विष्णु शिव, गिरा गौरि हनुमान।
करि प्रणाम भाषा रचूँ, जातकलग्न बिधान॥

मंगलाचरण।

ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः॥१॥

नक्षत्र तथा ग्रहों के पति और दिन के स्वामी तथा हजार किरणोंवाले श्रीसूर्यनारायण के लिए प्रणाम करता हूँ॥ १॥

प्रसूतागृह के द्वार का विचार।

तुलालिकुम्भाजकुलीरलग्ने
वेद्यं प्रसूतागृहपूर्वद्वारे।

कन्याधनुर्मीननृयुग्मलग्ने
स्यादुत्तरद्वारि प्रतीचिगोस्थः ॥ २ ॥

जन्म-समय में यदि तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मेष और कर्क; इनमें से कोई लग्न हो तो सूतिका के घर का द्वार पूर्वमुख जानना चाहिए। और कन्या, धन, मीन और मिथुन; इन लग्नों में से किसी में जन्म हो तो सूतिका के घर का द्वार उत्तर मुख जानना तथा वृष लग्न में जन्म हो तो पश्चिमाभिमुख सूतिका का द्वार जानना ॥ २ ॥

मृगारिलग्ने मकरे तथापि
भवेत्प्रसूतागृहदक्षिणस्याम् ।
एवं हि लग्नात्परिचिन्तनीयं
सूतीगृहद्वारमिदं प्रदिष्टम् ॥ ३ ॥

सिंह अथवा मकर लग्न में जन्म हो तो सूतिका का द्वार दक्षिणाभिमुख जानना। इसी प्रकार लग्न से सूतिका के गृह का द्वार विचारना चाहिए ॥ ३ ॥

प्रसूतागृहज्ञान ।

मेषकुलीरतुलालिघटैः प्रा-
गुत्तरतो गुरुसौम्यगृहेषु ।
पश्चिमतश्च वृषेण निवासो
दक्षिणभागकरौ मृगसिंहौ ॥ ४ ॥

जन्म-समय में मेष, कर्क, तुला, वृश्चिक अथवा कुम्भ लग्न हो तो

वास्तु से पूर्व की ओर; धन, मीन, मिथुन अथवा कन्या लग्न हो तो उत्तर की ओर; वृष लग्न हो तो पश्चिम की ओर तथा मकर अथवा सिंह लग्न हो तो वास्तु से दक्षिण की ओर बालक का जन्म जानना चाहिए ॥ ४ ॥

प्रसूता के समीप स्त्रीसंख्या ।

मीने मेषे च द्वे नार्यौ चत्वारि वृषकुम्भयोः ।
मकरे मिथुने पञ्च बाणाश्च धनकर्कयोः ।
अन्यलग्ने भवेत्त्रीणि प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ ५ ॥

जन्म-समय में मीन अथवा मेष लग्न हो तो प्रसूता के पास दो स्त्रियाँ; वृष अथवा कुंभ लग्न हो तो चार स्त्रियाँ; मकर, मिथुन, धन अथवा कर्क लग्न हो तो पाँच स्त्रियाँ तथा अन्य सिंह, कन्या, तुला अथवा वृश्चिक लग्न हो तो प्रसूता के पास तीन स्त्रियाँ कहना चाहिए ॥ ५ ॥

लग्नचन्द्रान्तर्गतस्थैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिकाः ।
बहिरन्तश्च चक्रार्धे दृश्यादृश्येऽन्यथापरे ॥ ६ ॥
स्वोच्चवक्रोपगैस्त्रिघ्नाः स्वस्थैर्द्विघ्नास्तदंशगैः ।
तथैव ग्रहतुल्यं स्याद्द्वयोजातिस्वरूपकैः ॥ ७ ॥

जन्म-समय में लग्न और चन्द्रमा के बीच में जितने ग्रह हों उतनी ही स्त्रियाँ सूतिका के पास जानना चाहिए। चक्रार्द्ध अर्थात् लग्न से सप्तम स्थान तक जितने ग्रह हों उतनी स्त्रियाँ सूतिका के

पास और अष्टम स्थान से बारहवें स्थान तक लग्न और चन्द्रमा के बीच में जितने ग्रह हों उतनी स्त्रियाँ सूतिका के घर से बाहर जानना चाहिए। जो ग्रह अपने उच्च में हों अथवा वक्र हों उनकी तिगुनी स्त्रियाँ होती हैं और जो ग्रह अपनी राशि के हों अथवा अपने नवांश में हों तो दुगुनी स्त्रियाँ सूतिका के पास होती हैं। ग्रहों की जाति, वर्ण और अवस्था के तुल्य ही स्त्रियों की जाति, वर्ण और अवस्था जानना चाहिए ॥ ६-७ ॥

प्रसूता के समीप कुमारी आदि की संख्या।

पापैश्च विधवा नारी क्रूरैरपि कुमारिका।
सौम्यग्रहैश्च सुभगा सूतिकायां विधीयते ॥ ८ ॥

लग्न और चन्द्रमा के बीच जितने पापग्रह हों उतनी स्त्रियाँ विधवाएँ, जितने क्रूरग्रह हों उतनी कन्याएँ और जितने शुभग्रह हों उतनी सौभाग्यवती (विवाहिता) स्त्रियाँ सूतिका के पास कहना चाहिए ॥ ८ ॥ *

* बालां पूर्णः शीतगुः सोमजोऽपि वृद्धां सौरिः कर्कशां भूमिपुत्रः।
आदित्येज्यौ सुप्रभूतां भृगुश्च कुर्वति स्त्रीं कर्कशां चापि वृद्धाम् ॥ १ ॥

लग्न और चन्द्रमा के बीच में पूर्ण चन्द्रमा या बुध हो तो बाला स्त्री, शनैश्चर हो तो वृद्धा, भौम हो तो कर्कशा, सूर्य और बृहस्पति हो तो सुन्दर सन्तानवाली और शुक्र हो तो कर्कशा तथा वृद्धा स्त्री होती है ॥ १ ॥

आषोडशाद्भवेद्बाला तरुणी त्रिंशका मता।
पञ्चपञ्चाशका प्रौढा नारी वृद्धा ततः परम् ॥ २ ॥

सोलह वर्ष तक बाला, तीस वर्ष तक तरुणी, पचपन वर्ष तक प्रौढ़ा और इससे ऊपर वृद्धा कही जाती है ॥ २ ॥

बालक के शब्द का ज्ञान।

शब्दो मेषे वृषे सिंहे मिथुने वा तथा तुले।
घटस्त्रियोरर्धशब्दः शेषाः शब्दविवर्जिताः ॥ ९ ॥

जन्मकाल में मेष, वृष, मिथुन, सिंह अथवा तुला लग्न हो तो जन्मते ही बालक शब्द करता (रोता) है तथा कुंभ और कन्या लग्न हो तो आधा शब्द करता (थोड़ा रोता) है। शेष कर्क, वृश्चिक, धन, मकर अथवा मीन लग्नों में जन्म हो तो बालक शब्द वर्जित उत्पन्न होता है (रोता नहीं है) ॥ ९ ॥

मेषत्रिपञ्चाननतौलिलग्ने
विस्मृत्य सर्वं बहुरोदिति स्म।
स्वल्पं घटे स्त्रीशिशुरन्यलग्ने
नो रोदिति ज्ञानबलस्य सत्त्वात् ॥ १० ॥

मेष, वृष, मिथुन, सिंह अथवा तुला लग्न में उत्पन्न हुआ बालक सब ज्ञान को भुलाकर बहुत रोता है और कुंभ तथा कन्या लग्न में थोड़ा सा रोता है। अन्य कर्क, वृश्चिक, धन, मकर और मीन लग्न में उत्पन्न हुआ बालक ज्ञानबल के कारण रोता नहीं है ॥ १० ॥

जन्मज्ञान।

सिंहे कन्याधनुर्मीने कर्के मेषे तथा तुले।
अन्तरिक्षे भवेज्जन्म शेषे भूमौ निगद्यते ॥ ११ ॥

सिंह, कन्या, धन, मीन, कर्क, मेष और तुला लग्न में बालक का जन्म अन्तरिक्ष (छत, शय्या, तख्त आदि पर) में होता है। शेष वृष, मिथुन, वृश्चिक, मकर और कुंभ लग्न में बालक का जन्म भूमि पर होता है ॥ ११ ॥

ग्रहविभाग तथा खट्वाज्ञान।

प्राच्यादिगृहे क्रियादयो
द्वौ द्वौ कोणगताद्विमूर्तयः।
शय्यास्वपि वास्तुवद्वदे-
त्पादैः षट्त्रिनवान्त्यसंस्थितैः ॥ १२ ॥

इस श्लोक से दो बातों का विचार करना चाहिए कि बालक का जन्म घर के किस भाग में हुआ है और शय्या का सिरहाना किस दिशा में है।

मेष और वृष लग्न में पूर्व, मिथुन लग्न में अग्निकोण, कर्क और सिंह लग्न में दक्षिण, कन्या लग्न में नैर्ऋत्यकोण, तुला और वृश्चिक लग्न में पश्चिम, धन लग्न में वायव्यकोण, मकर और कुंभ लग्न में उत्तर तथा मीन लग्न में ईशान की ओर जन्मस्थान या खाट का सिरहाना कहना चाहिए।

जन्म-लग्न से तीसरे, छठे, नवें और बारहवें स्थान से खाट के पायों का विचार करना चाहिए। तीसरे स्थान से सिरहाने का दाहना पाया, छठे स्थान से पिछला दाहना पाया, नवें स्थान से पिछला बाँया पाया और बारहवें स्थान से सिरहाने का बाँया पाया जानना चाहिये।

सूतिकास्थान तथा खट्वाचक्र।

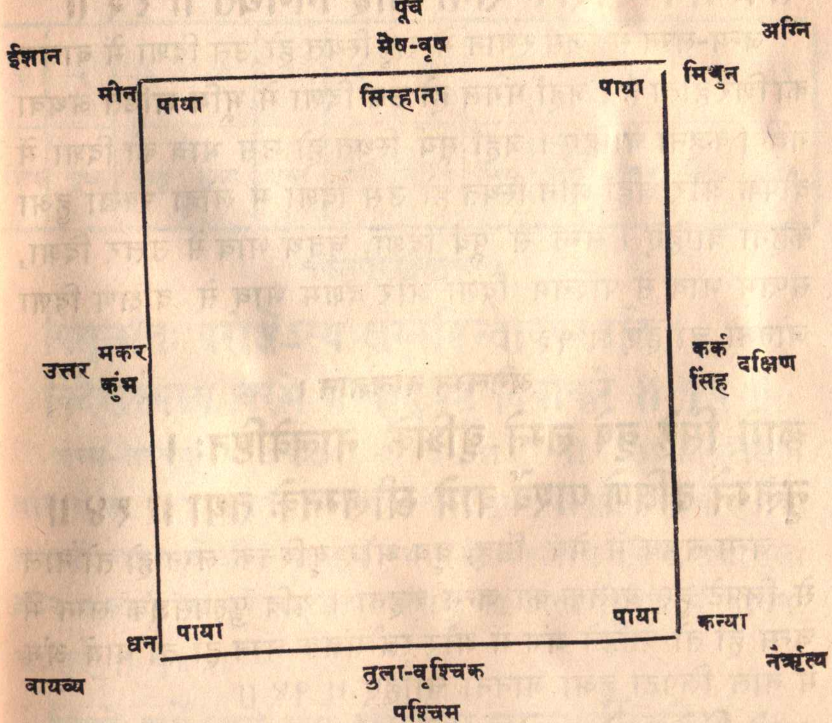

जिस भाव को पापग्रह अथवा निर्बल ग्रह देखते हों या वहाँ स्थित हों उसी के स्थान का अंग निर्बल अथवा फटा टूटा जानना। और जिस भाव में शुभ तथा बलवान् ग्रह बैठे हों या देखते हों वह स्थान या खाट का अंग पुष्ट जानना चाहिए ॥ १२ ॥

बालक के शिरआदि का ज्ञान।

यत्र राहुस्तत्र शिरो मंगले भूमिखण्डनम्।
रविस्थाने भवेद्दीपः शनौ लोहं निगद्यते ॥ १३ ॥

जन्म-लग्न से जिस स्थान में राहु स्थित हो उस दिशा में बालक का शिर होता है। जहाँ मंगल हो उस दिशा में भूमि खंडित अथवा गड़हा कहना चाहिए। जहाँ सूर्य स्थित हो उस भाव की दिशा में दीपक और जहाँ शनि स्थित हो उस दिशा में लोहा रक्खा हुआ कहना चाहिए। लग्न से पूर्व दिशा, चतुर्थ भाव से उत्तर दिशा, सप्तम भाव से पश्चिम दिशा और दशम भाव से दक्षिण दिशा जानना चाहिए ॥ १३ ॥

अंगलग्न नालज्ञान।

छागे सिंहे वृषे लग्ने वृश्चिके नालवेष्टितः।
नृलग्ने दक्षिणे पार्श्वे वामे स्त्रीलग्नके तथा ॥ १४ ॥

जन्म-समय में मेष, सिंह, वृष और वृश्चिक लग्न हो तो नाल से लिपटे हुए बालक का जन्म कहना। यदि पुरुषसंज्ञक लग्न में जन्म हो तो दाहिने अंग में और स्त्रीसंज्ञक लग्न हो तो बायें अंग में नाल लिपटा हुआ जानना चाहिए ॥ १४ ॥

छागे सिंहे वृषे लग्ने तत्स्थे मन्देऽथवा कुजे।
राश्यंशसदृशे गात्रे जायते नालवेष्टितः ॥ १५ ॥

जन्म-समय में मेष, वृष और सिंह लग्न में शनैश्चर अथवा मंगल बैठे हों तो लग्न के नवांशक की राशि के तुल्य अंग में नाल लिपटा

बालक उत्पन्न होता है। अंगों का ज्ञान चक्र से समझ लेना। जिस लग्न में जन्म हो वही शिर समझना चाहिए ॥ १५ ॥

अंगज्ञानचक्र।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
शिर	मुख	बाहु	हृदय	उदर	कटि	वस्ति	लिंग	ऊरू	जानु	जंघा	चरण

पितृपरोक्षज्ञान।

पितुर्जातः परोक्षेऽस्य लग्नमिन्दावपश्यति।
विदेशस्थस्य चरभे मध्याद्भ्रष्टे दिवाकरे ॥ १६ ॥

जन्म-लग्न को यदि चंद्रमा नहीं देखता हो तो पिता के परोक्ष में बालक का जन्म कहना चाहिए। और सूर्य मध्यभ्रष्ट अर्थात् नवें, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान में चरराशि (मेष, कर्क, तुला और मकर) का हो तो उत्पन्न शिशु का पिता विदेश में जानना चाहिए ॥ १६ ॥

स्थिरे सूर्येऽष्टमे धर्मे लाभे वा चान्त्यसंस्थिते।
न पश्येच्चन्द्रमा लग्नं परोक्षे जायते शिशुः ॥१७॥

यदि चन्द्रमा लग्न को न देखता हो और सूर्य नवें, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान में स्थिर राशि का हो तो पिता के परोक्ष

में बालक का जन्म कहना चाहिए; परन्तु पिता को स्वदेश में ही जानना और द्विस्वभाव राशि में हो तो मार्ग में पिता के रहते जन्म कहना चाहिए ।। १७ ।।

उदयस्थेऽपि वा मन्दे कुजे वाऽस्तं समागते ।
स्थिते वान्तः क्षपानाथेशशाङ्कसुतशुक्रयोः ॥ १८ ॥

१ यदि चन्द्रमा लग्न को न देखता हो और शनि जन्मलग्न में हो अथवा २ सप्तम स्थान में मंगल हो अथवा ३ बुध और शुक्र के बीच में चन्द्रमा हो तो पिता के परोक्ष में रहते बालक का जन्म कहना चाहिए । ये तीन योग हैं ।। १८ ।।

पितृबन्धनयोग ।

क्रूरर्क्षगतावशोभनौ सूर्याद्द्यूननवात्मजस्थितौ ।
बद्धस्तुपिता विदेशगः स्वे वा राशिवशादथो पथि ॥

सूर्य से सातवें, नवें और पाँचवें स्थान में क्रूर राशियों (मेष, सिंह, वृश्चिक, मकर और कुंभ) में मंगल और शनैश्चर स्थित हों तो उत्पन्न बालक के पिता को बंधन में जानना चाहिए । सूर्य चर-राशि का हो तो विदेश में, स्थिर राशि का हो तो स्वदेश में और द्विस्वभाव राशि का सूर्य हो तो मार्ग में बँधा जानना चाहिए ।।१९।।

शिरआदिप्रसवज्ञान ।

शीर्षोदये विलग्ने मूर्धाप्रसवोन्यथोदये चरणौ ।
उभयोदये च हस्तौ शुभदृष्टःशोभनोन्यथाकष्टः ॥२०॥

यदि जन्म-लग्न में शीर्षोदय राशि (३, ५, ६, ७, ८, ११) हों तो शिर के बल से तथा जन्म-लग्न में पृष्ठोदय राशि (१, २, ४, ९, १०) हों तो चरणों के बल से और उभयोदय (मीन) राशि हो तो हाथों के बल से बालक का जन्म कहना चाहिए । लग्न पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो सुख से और पापग्रहों की दृष्टि हो तो कष्ट से बालक का जन्म होता है ।। २० ।।

जारजातज्ञान ।

न लग्नमिन्दुं च गुरुर्निरीक्षते
न वा शशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी
परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् ॥ २१ ॥

लग्न और चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो तो परपुरुष से उत्पन्न होता है अथवा सूर्ययुक्त चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो अथवा पापग्रह युक्त चन्द्रमा सूर्य के साथ हो तो भी परपुरुष से उत्पन्न हुआ जानना ।। २१ ।।

नौकाजन्मज्ञान ।

पूर्णे शशिनि स्वराशिगे सौम्ये लग्नगते गुरौ सुखे ।
लग्ने जलजेऽस्तगेऽपिवा चन्द्रे पोतगते प्रसूयते ॥२२॥

पूर्ण चन्द्रमा अपनी राशि में हो और बुध लग्न में तथा बृहस्पति चौथे स्थान में हो तो बालक का जन्म नाव या जहाज में होता है । अथवा जलचर राशियाँ (कर्क, मकर का परार्द्ध, मीन) लग्न में हों

और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो तो भी नाव या जहाज में जन्म कहना चाहिए ॥ २२ ॥

जलादिजन्मस्थानज्ञान ।

आप्योदयमाप्यगः शशी सम्पूर्णः समवेक्षतेऽथवा ।
मेषूरणबन्धुलग्नगःस्यात्सूतिःसलिले न संशयः ॥२३॥

जलचर राशि लग्न में हो तथा चन्द्रमा भी लग्न में ही स्थित हो अथवा पूर्ण चन्द्रमा पूर्णदृष्टि से लग्न को देखता हो अथवा जलराशि में स्थित चन्द्रमा दशवें, चौथे और लग्न में हो तो जल के ऊपर या जल के समीप जन्म कहना चाहिए ॥ २३ ॥

उदयोडुपयोर्व्ययस्थिते गुप्त्यां पापनिरीक्षिते शनौ ।
अलिकर्कयुते विलग्नगे सौरे शीतकरेक्षितेऽवटे ॥२४॥

लग्न और चन्द्रमा से शनि बारहवें स्थान में हो और उसको पापग्रह देखते हों तो बालक का जन्म कारागार (कैदखाने) में होता है। और कर्क अथवा वृश्चिक राशि में स्थित शनि लग्न में हो और चन्द्रमा उसको देखता हो तो खाई अथवा खाता में जन्म कहना चाहिए ॥ २४ ॥

मन्देऽब्जगते विलग्नगे बुधसूर्येन्दुनिरीक्षितेक्रमात् ।
क्रीडाभवनेसुरालये प्रवदेज्जन्म च सोषरावनौ ॥२५॥

जलराशि के लग्नस्थ शनैश्चर को बुध देखता हो तो विहारस्थान में, सूर्य देखता हो तो देवालय में और चन्द्रमा देखता हो तो ऊपर भूमि में बालक का जन्म कहना चाहिए ॥ २५ ॥

नृलग्नगं प्रेक्ष्य कुजः श्मशाने
रम्ये सितेन्दू गुरुरग्निहोत्रे ।
रविर्नरेन्द्रामरगोकुलेषु
शिल्पालये ज्ञः प्रसवं करोति ॥ २६ ॥

पुरुषसंज्ञक राशि का शनि लग्न में हो और उसको मंगल देखता हो तो श्मशान में तथा नरलग्नगत शनि को शुक्र और चन्द्रमा देखते हों तो सुन्दर रमणीक स्थान में, बृहस्पति देखता हो तो हवनशाला में, सूर्य देखता हो तो राजमन्दिर, देवालय अथवा गोशाला में एवं बुध देखता हो तो शिल्पागार में जन्म कहना चाहिए ॥ २६ ॥

राश्यंशसमानगोचरे मार्गे जन्म चरे स्थिरे गृहे ।
स्वर्क्षांशगते स्वमन्दिरे बलयोगात्फलमंशकक्षयोः ॥२७॥

लग्नराशि और उसके नवांश की राशि के तुल्य स्थान में जन्म कहना चाहिए। यदि लग्न और नवांश राशि चर हो तो मार्ग में जन्म कहना चाहिए। यदि लग्न और नवांश राशि स्थिर हो तो घर में जन्म कहना चाहिए तथा लग्न और नवांश राशि द्विस्वभाव हो तो घर से बाहर जन्म कहना चाहिए। लग्न की राशि का ही नवांश हो तो अपने ही घर में जन्म कहना चाहिए। यदि लग्न राशि और नवांश राशि भिन्न-भिन्न हों तो जो बलवान् हो उसी के तुल्य स्थान में जन्म कहना चाहिए। किन्तु पूर्वोक्त योगों के अभाव में यह फल होता है ॥ २७ ॥

मातृवियोग तथा दीर्घायुज्ञान ।

आरार्कजयोस्त्रिकोणयोश्चन्द्रेऽस्तेचविस्सृज्यतेऽम्बया ।
दृष्टेऽमरराजमन्त्रिणा दीर्घायुः सुखभाक् च सस्मृतः२८

जन्म-समय में मंगल और शनैश्चर त्रिकोण (नवें और पाँचवें) स्थान में हों और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो तो उत्पन्न बालक को माता त्याग देती है। यदि इस योग में चन्द्रमा पर बृहस्पति की पूर्ण दृष्टि हो तो वह त्यागा हुआ भी बालक दीर्घायु और सुखी होता है ॥ २८ ॥

मातृवियोगजमृत्युज्ञान ।

पापेक्षिते तुहिनगावुदये कुजेऽस्ते
त्यक्तो विनश्यति कुजाऽर्कजयोस्तथाऽऽये ।
सौम्येऽपि पश्यति तथाविधहस्तमेति
सौम्येतरेषु परहस्तगतोऽप्यनायुः ॥ २९ ॥

पापग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा लग्न में हो और मंगल सातवें स्थान में हों तो माता से त्यागा हुआ बालक मर जाता है। अथवा पापग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा लग्न में हो और मंगल तथा शनि ग्यारहवें हों तो भी त्यागा हुआ बालक मर जाता है। यदि पूर्वोक्त योग में चन्द्रमा को शुभग्रह देखते हों तो जो शुभग्रह देखता है उसी के जाति-वाले मनुष्य के हाथ में वह बालक आकर बहुत दिन तक जीता है। यदि पूर्वोक्त योग में चन्द्रमा को शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के ग्रह देखते हों तो किसी अन्य के हाथ में आकर भी मर जाता है ॥ २९ ॥

मातृआदिगृहजन्मज्ञान ।

पितृमातृगृहेषु तद्बलात्तरुशालादिषु नीचगैः शुभैः ।
यदि नैकगतैस्तु वीक्षितौ लग्नेन्दू विजने प्रसूयते॥३०॥

जन्मकाल में पितृसंज्ञक ग्रह बलवान् हों तो पिता आदि के घर में और मातृसंज्ञक ग्रह बलवान् हों तो माता मौसी आदि के घर में जन्म कहना चाहिए। यदि सब शुभग्रह नीच राशि में टिके हों तो वृक्ष के नीचे, मकान के समीप अथवा बगीचा आदि में जन्म कहना चाहिए। और नीच राशि में और एक स्थान में बैठे हुए शुभग्रह यदि चन्द्रमा और लग्न को न देखते हों तो जनरहित स्थान (वन आदि) में जन्म होता है। यदि नीचस्थ सब शुभग्रह चन्द्रमा और लग्न को देखते हों तो जनसमुदाय में जन्म कहना चाहिए ॥ ३० ॥

अन्धकार तथा प्रकाशआदिज्ञान ।

मन्दर्क्षांशे शशिनि हिबुके मन्ददृष्टेऽब्जगेवा
सद्युक्ते वा तमसि शयने नीचसंस्थैश्च भूमौ ।
यद्वद्राशिर्व्रजति हरिजं गर्भमोक्षं तु तद्वत्
पापैश्चन्द्रात्स्मरसुखगतैः क्लेशमाहुर्जनन्याः॥३१॥

जन्मकाल में चन्द्रमा शनि के नवांश में अथवा चौथे स्थान में स्थित हो तो अन्धकार में जन्म कहना चाहिए। या चन्द्रमा शनि से देखा जाता हो अथवा शुभग्रह से युक्त हो तो अन्धकार में जन्म

कहना चाहिए। यदि इन योगों में चन्द्रमा को सूर्य देखता हो त प्रकाश[1] में जन्म कहना चाहिए।

यदि ग्रह नीच स्थान में स्थित हों तो भूमि शयन कहना चाहिए लग्न की राशि शीर्षोदय हो तो बालक का मुख ऊपर को, पृष्ठो दय हो तो पीठ की ओर मुख किये हुए जन्म होता है। या शीर्षो दय में शिर के बल, पृष्ठोदय में पैरों के बल तथा उभयोदय राशि हो तो हाथों के बल बालक का जन्म कहना चाहिए। यदि चन्द्रम से सातवें और चौथे स्थान में पापग्रह हों तो माता को जन्म-सम कष्ट कहना चाहिए॥ ३१॥

सुखप्रसवज्ञान।

चतुर्थे दशमे सौम्याः सुखेन प्रसवङ्कराः।
त्रिकोणास्तगताः पापाः कष्टतः प्रसवङ्कराः॥ ३२॥

जन्मलग्न से दशवें और चौथे स्थान में शुभग्रह हों तो सुख प्रसव होता है और नवें, पाँचवें तथा सातवें स्थान में पापग्रह ह तो कष्ट से प्रसव (जन्म) होता है॥ ३२॥

दीपकतैलवर्तिज्ञान।

स्नेहः शशाङ्कादुदयाच्च वर्ति-
र्दीपोऽर्कयुक्तर्क्षवशाच्चराद्यः।

१ यवनेश्वरः—"सौरांशकस्थे शशिनिप्रलग्ने जले जलाख्यांशकमाश्रिते वा स्वांशस्थिते केन्द्रगतेऽर्कजे वा जातस्तमिश्रे यदि नार्कदृष्टः।
सारावल्याम्—"बलवति सूर्येदृष्टे बहुप्रदीपा धरा कुपुत्रेण अन्यैर्व्यपगतवीर्यैः सूतो ज्योतिस्तृणैर्भवति॥

द्वारं च तद्वास्तुनि केन्द्रसंस्थै-
र्ज्ञेयं ग्रहैर्वीर्यसमन्वितैर्वा॥ ३३॥

चन्द्रमा[1] से दीपक के तेल का और लग्न से दीपक की बत्ती का विचार करना चाहिए अर्थात् चन्द्रमा राशि के प्रथमांश में हो तो दीपक तेल से भरा हुआ होता है। चन्द्रमा के जितने अंश बीते हों उतना ही दीपक तेल से खाली कहना चाहिए। इसी प्रकार लग्न के जितने अंश बीते हों उतनी ही बत्ती जली हुई होती है और जितने अंश बाकी हों उतनी बत्ती जलने से बाकी रही कहना चाहिए।

जिस राशि में सूर्य हो उसी के अनुसार दीपक की अवस्था अर्थात् चर[2] राशि हो तो दीपक लेकर इधर-उधर फिरते हुए जानना

१—"चन्द्रात्तैलज्ञानमेवं विचार्य बुद्ध्या सर्वं सूतिकावेश्मनीह। लग्नारम्भे वर्तिकापूर्णदेहं मध्ये त्वर्धा स्वल्पशेषावसाने॥" इस प्रकार बुद्धि से विचार-कर चन्द्रद्वारा दीप के तेल का हाल कहना और लग्न से बत्ती का अर्थात् लग्नारंभ में पूरी बत्ती, मध्य में आधी बत्ती और लग्नान्त हो तो थोड़ी सी बची हुई बत्ती कहना।

२—"चरर्क्षगे रवौ तदा चरप्रदीपकं वदेत्। स्थिरर्क्षगे स्थिरं वदेत् द्विदेहभे द्विधा तदा॥ चरलग्ने चरो दीपः स्थिरे स्वस्थश्च संस्थितः। द्विदेहभे करस्थः स्यादिति केचिद् बुधा जगुः॥" चरराशि में सूर्य हो तो दीपक चलता हुआ, स्थिरराशि में हो तो दीपक स्थिर और द्विस्वभाव में सूर्य हो तो कभी स्थिर और कभी चलता हुआ कहना। किसी-किसी का मत है कि लग्न चर हो तो दीप चलता हुआ, स्थिर लग्न हो तो एक स्थान में रक्खा हुआ और द्विस्वभाव लग्न हो तो हाथ में लिये हुए कहना।

और स्थिर हो तो दीपक एक ही स्थान पर स्थिर जानना तथा सूर्य द्विस्वभाव राशि में हो तो हाथ में स्थित दीपक कहना यदि सूर्य शुभग्रहयुक्त हो तो तेल निर्मल और पापयुक्त हो तो तेल गँदला कहना।

केन्द्र में स्थित ग्रहों के क्रम से सूतिका के घर का दरवाजा कहना चाहिए अर्थात् केन्द्र में स्थित ग्रह की जो दिशा हो उस दिशा में सूतिका के घर का दरवाजा कहना चाहिए। यदि केन्द्र में बहुत ग्रह हों तो उनमें जो ग्रह बलवान् हो उसकी दिशा में सूतिका के घर का दरवाजा कहना चाहिए ।। ३३ ।।

दीपकस्थ घृत-तैलादि का ज्ञान ।

लग्नेन्दुमध्ये शनौ मिष्टतैलं
सूर्ये भवेत्तस्य घृतस्य दीपम् ।
शेषा ग्रहास्तत्कटुकं च तैल-
मेवं प्रसूतौ खलु दीपमाह ॥ ३४ ॥

जन्म-समय में लग्न और चन्द्रमा के बीच में शनि हो तो दीपक में मीठा तेल, सूर्य हो तो दीपक में घृत और शेष ग्रह लग्न और चन्द्रमा के बीच में हों तो कड़ुवा तेल दीपक में कहना चाहिए ।।३४।।

जीर्णनूतनादिगृहभेदज्ञान ।

जीर्णं संस्कृतमर्कजे क्षितिसुते दग्धं नवं शीतगौ
काष्ठाढ्यं न दृढं रवौ शशिसुते तन्नैकशिल्पोद्भवम् ।
रम्यं चित्रयुतं नवं च भृगुजे जीवे दृढं मन्दिरं
चक्रस्थश्च यथोपदेशरचनां सामन्तपूर्वां वदेत् ॥ ३५ ॥

जन्मकाल में शनैश्चर बलवान् हो तो मरम्मत किया हुआ पुराना सूतिकाघर, मंगल बलवान् हो तो जला हुआ, चन्द्रमा बलवान् हो तो नया, सूर्य बलवान् हो तो पुष्टतारहित काठ लगा हुआ, बुध बलवान् हो तो अनेक प्रकार के शिल्प (कारीगरी) से युक्त, शुक्र बलवान् हो तो रमणीय चित्रों से युक्त नया और बृहस्पति बलवान् हो तो बहुत दृढ़ सूतिकाघर कहना चाहिए। जिस ग्रह से घर का विचार कहा है उस ग्रह के समीप आगे-पीछे जितने ग्रह हों उतने कोठा-कोठरी आगे या पीछे विचारपूर्वक कहना चाहिए।।३५।।

बालकवर्णज्ञान ।

लग्ननवांशपतुल्यतनुः स्याद्वीर्ययुतग्रहतुल्यवपुर्वा ।
चन्द्रसमेतनवांशपवर्णः कादिविलग्नविभक्तभगात्रः ३६

जन्मलग्न में जो नवांश हो उसके स्वामी के तुल्य अथवा सब ग्रहों में जो ग्रह अधिक बलवान् हो उसके तुल्य या चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में हो उस नवांशराशि के पति के तुल्य बालक का शरीर और वर्ण कहना चाहिए। यदि लग्नादि नवांश राशि दीर्घ शरीर हो तो बालक का बड़ा अंग और नवांशादि राशि मध्य शरीर की हो तो मध्य शरीर और ह्रस्व शरीर राशि हो तो बालक का भी उसी के तुल्य छोटा शरीर कहना चाहिए ।। ३६ ।।

ग्रहस्वरूपज्ञान ।

मधुपिङ्गलदृक् चतुरस्रतनुः ।
पित्तप्रकृतिः सविताल्पकचः ।
तनुवृत्ततनुर्बहुवातकफः
प्राज्ञश्च शशी मृदुवाक् शुभदृक् ॥ ३७ ॥

सूर्य शहद के समान पिङ्गलवर्ण नेत्र, चौरस शरीर, पित्त-प्रकृति और थोड़े केशोंवाला होता है। चन्द्रमा दुर्बल तथा गोलाकार शरीर, वात और कफप्रकृति, बुद्धिमान्, मीठी वाणी और सुंदर नेत्रोंवाला होता है ॥ ३७ ॥

क्रूरदृक् तरुणमूर्तिरुदारः
पैत्तिकः सुचपलः कृशमध्यः ।
श्लिष्टवाक् सततहास्यरुचिर्ज्ञः
पित्तमारुतकफप्रकृतिश्च ॥ ३८ ॥

मंगल क्रूरदृष्टि, युवावस्थासंपन्न, उदार स्वभाव, पित्तप्रकृति, चंचल स्वभाव और मध्य से पतले अंगवाला होता है। बुध अस्पष्ट (गद्गद) वाणी, सदा हास्य में रुचि और वात-पित्त-कफप्रकृतिवाला होता है ॥ ३८ ॥

बृहत्तनुः पिङ्गलमूर्द्धजेक्षणो
बृहस्पतिः श्रेष्ठमतिः कफात्मकः ।
भृगुः सुखी कान्तवपुः सुलोचनः
कफानिलात्मा सितवक्रमूर्द्धजः ॥ ३९ ॥

बृहस्पति बड़े शरीरवाला, भूरे नेत्र तथा भूरे बाल, श्रेष्ठ बुद्धि और कफप्रकृतिवाला होता है। शुक्र सुखी, सुन्दर शरीर, अच्छे नेत्र, कफ-वातप्रकृति और सफेद तथा टेढ़े (कुञ्चित) बालोंवाला होता है ॥ ३९ ॥

मन्दोऽलसः कपिलदृक् कृशदीर्घगात्रः
स्थूलद्विजः परुषरोमकचोऽनिलात्मा ।

स्नाय्वस्थ्यसृक्त्वगथ शुक्रवसा च मज्जा
मन्दार्कचन्द्रबुधशुक्रसुरेज्यभौमाः ॥ ४० ॥

शनैश्चर आलसी स्वभाव, कंजी आँखें, दुबला और ऊँचा शरीर, मोटे दाँत और रूखे रोम तथा बालोंवाला होता है।

ग्रहों की धातुएँ इस प्रकार हैं—शनि की स्नायु (नस), सूर्य की हड्डी, चन्द्र की रुधिर, बुध की त्वचा, शुक्र की वीर्य, बृहस्पति की वसा (चर्बी) और मंगल की धातु मज्जा होती है ॥ ४० ॥

रक्त गौरआदि वर्णज्ञान ।

रक्तश्यामो भास्करो गौर इन्दु-
र्नात्युच्चाङ्गो रक्तगौरश्च वक्रः ।
दूर्वाश्यामो ज्ञो गुरुर्गौरगात्रः
श्यामः शुक्रो भास्करिः कृष्णदेहः ॥ ४१ ॥

सूर्य का वर्ण लाल और काला, चन्द्रमा का वर्ण गोरा, मंगल कमल की समान लाल और गौर वर्ण तथा छोटा शरीर, बुध दूब की समान हरित वर्ण, बृहस्पति गौर वर्ण, शुक्र श्याम वर्ण (कृष्ण-गौरवर्ण) और शनैश्चर का काला वर्ण होता है ॥ ४१ ॥

द्रेष्काणवश अङ्गचिह्नज्ञान ।

कं दृक्श्रोत्रनसाकपोलहनवो वक्त्रं च होरादय-
स्तेकण्ठांसकबाहुपार्श्वहृदये क्रोडानि नाभिस्ततः ।
बस्तिः शिश्नगुदे ततश्च वृषणावूरू ततो जानुनी
जंघेंघ्रीत्युभयत्र वाममुदितैर्द्रेष्काणभागैस्त्रिधा ॥ ४२ ॥

जन्मलग्न के द्रेष्काण के क्रम से तीन भागों में शरीर के चिह्नों

का वर्णन करना चाहिए। लग्न का पहला द्रेष्काण हो तो लग्न शिर, दूसरा और बारहवाँ घर दाहिने बायें नेत्र, तीसरा और ग्यारहवाँ घर दाहिना बायाँ कान, चौथा और दशवाँ घर दाहिनी बाईं नासिका, पाँचवाँ और नवाँ घर दोनों गाल, छठा और आठवाँ घर ठोढ़ी और सातवाँ घर मुख कहना चाहिए। यदि लग्न का दूसरा द्रेष्काण हो तो लग्न कण्ठ, दूसरा और बारहवाँ घर दाहिने बायें कन्धे, तीसरा और ग्यारहवाँ घर दोनों भुजाएँ, चौथा और दशवाँ घर दोनों बगलें, पाँचवाँ और नवाँ घर हृदय, छठा और आठवाँ घर पेट तथा सप्तम घर नाभि कहना चाहिए इसी प्रकार लग्न का तीसरा द्रेष्काण हो तो लग्न बस्ति (पेड़ू). दूसरा और बारहवाँ घर लिङ्ग और गुदा, तीसरा और ग्यारहवाँ अंडकोश, चौथा और दशवाँ घर ऊरू , पाँचवाँ और नवाँ घर जानु, छठा और आठवाँ घर जाँघें और सप्तम घर चरण कहना चाहिए। लग्न से सप्तम पर्यन्त अंग का दक्षिण भाग और सप्तम से द्वादश भाव तक अंग का वाम भाग कल्पना कर व्रण मशकादि चिह्न कहना ॥ ४२ ॥

व्रणादिचिह्नज्ञान।

तस्मिन् पापयुते व्रणं शुभयुते दृष्टे च लक्ष्मादिशे-
त्स्वर्क्षांशे स्थिरसंयुतेषु सहजः स्यादन्यथाऽगन्तुकः।
मन्देऽश्मानिलजोऽग्निशस्त्रविषजो भौमे बुधे भूर्भुवः
सूर्येकाष्ठचतुष्पदेषु हिमगौभृङ्ग्यब्जजोऽन्यैःशुभम् ४३

जिस राशि में पापग्रह बैठे हों अथवा उसे देखते हों उस अंग में घाव आदि कहना चाहिए। और जिस राशि में शुभग्रह बैठे हों अथवा उसे देखते हों तो उस अंग में मसा, तिल आदि कहना चाहिए। यदि ग्रह अपनी राशि या अपने नवांश में स्थित हों अथवा

स्थिर राशि या स्थिर राशि के नवांश में स्थित हों तो जन्म के समय उत्पन्न मसा, तिल, लशुन आदि चिह्न कहना चाहिए। इससे विपरीत हो तो आगन्तुक चिह्न जानना। जो अंगराशि शनैश्चर से संयुक्त अथवा दृष्ट हो तो पत्थर या वायु से उत्पन्न घाव आदि होता है। यदि अंगराशि मंगल से युक्त अथवा दृष्ट हो तो अग्नि, हथियार और विष से उत्पन्न चिह्न होता है। जो अंगराशि बुध से युक्त या दृष्ट हो तो जमीन में गिरने आदि से चिह्न होता है। यदि अंगराशि सूर्य से युक्त या दृष्ट हो तो काष्ठ के लगने से या पशु के मारने से चिह्न होता है। यदि अंगराशि चन्द्रमा से युक्त या दृष्ट हो तो सींगवाले या जलचर जीवों से उत्पन्न व्रण आदि का चिह्न होता है ॥ ४३ ॥

अंगविभागचिह्नचक्र।

१	२	३	४	५	६	७	राशि
शिर	नेत्र	कान	नाक	गाल	दाढ़ी	मुख	प्रथम द्रेष्काणदक्षिण अंग
कंठ	स्कन्ध	बाहु	पार्श्व	हृदय	पेट	नाभि	द्वितीयद्रेष्काणदक्षिण अंग
बस्ति	लिंग	अंड-कोश	ऊरु	जानु	जंघा	चरण	तृतीयद्रेष्काणदक्षिण अंग
१	१२	११	१०	९	८	७	राशि
शिर	नेत्र	कान	नाक	गाल	दाढ़ी	मुख	प्रथमद्रेष्काण वाम अंग
कंठ	स्कन्ध	बाहु	पार्श्व	हृदय	पेट	नाभि	द्वितीय द्रेष्काण वाम अंग
बस्ति	लिंग	अंड-कोश	ऊरु	जानु	जंघा	चरण	तृतीय द्रेष्काण वाम अंग

समनुपतिता यस्मिन्भागे त्रयः सबुधा ग्रहा
भवति नियमात्तस्यावाप्तिः शुभेष्वशुभेऽपि वा।
व्रणकृदशुभः षष्ठे देहे तनोर्भसमाश्रिते
तिलकमशकैर्दृष्टःसौम्यैर्युतश्च सलक्ष्मवान्॥४४॥

जिस वाम या दक्षिण अंग राशि में बुधयुक्त तीन ग्रह बैठे हों उस अंग में अवश्य चिह्न होते हैं। यदि शुभग्रह हों तो शुभचिह्न और पापग्रह हों तो घाव आदि चिह्न होते हैं। यदि छठे स्थान में पापग्रह बैठा हो तो उपर्युक्त चक्रानुसार अंग में घाव होता है। यदि छठे स्थान में स्थित पापग्रह शुभग्रहों से देखा जाता हो तो उस अंग में तिल, मसा आदि चिह्न जानना और यदि वह पापग्रह शुभग्रहों से युक्त हो तो लशुन चिह्न (काले बालों से युक्त चकत्ता) जानना चाहिए ॥ ४४ ॥

लशुनचिह्नयोग।

अर्कसूनुः कुजो राहुः पञ्चमस्थः प्रसूतये।
लशुनं वामकुक्ष्यां च गर्गाचार्येण भाषितम् ॥४५॥

जन्मकाल में शनैश्चर, मंगल और राहु पाँचवें घर में हों तो बाईं कोख में लशुन का चिह्न होता है। ऐसा गर्गाचार्य ने कहा है ॥ ४५ ॥

षडंगुलीज्ञान।

दशमे बुधजीवौ च सूर्यभौमौ च कण्टके।
तृतीयैकादशे पापे बालकस्य षडङ्गुलीः ॥४६॥

जन्मकाल में दशवें स्थान में बुध और बृहस्पति हों और केन्द्र १।४।७।१० स्थान में सूर्य तथा मंगल हों एवं तीसरे और ग्यारहवें पापग्रह हों तो उत्पन्न बालक के छह अँगुलियाँ होती हैं ॥४६॥

नेत्रविकारज्ञान।

द्वादशे चन्द्रभौमौ वा वामनेत्रं विनश्यति।
द्वादशे रविराहू च दक्षचक्षुर्विनाशयेत् ॥ ४७ ॥

यदि जन्मकाल में बारहवें स्थान में चन्द्रमा और मंगल हों तो बायाँ नेत्र नष्ट हो जाता है। यदि बारहवें स्थान में सूर्य और राहु हों तो दाहिना नेत्र नष्ट हो जाता है ॥ ४७ ॥

मूकयोग।

सहजस्थो यदा शुक्रः सिंहे मेषे बृहस्पतिः।
दशमे रविभौमौ च मूको भवति बालकः ॥ ४८ ॥

जन्मकाल में तीसरे स्थान में शुक्र स्थित हो और मेष या सिंह का बृहस्पति हो तथा दशवें स्थान में सूर्य और मंगल हों तो बालक गूँगा होता है ॥ ४८ ॥

म्लेच्छयोग।

सिंहलग्ने यदा जातो यामित्रे च शनैश्चरः।
ब्रह्मपुत्रोऽपि सञ्जातो म्लेच्छो भवति बालकः ॥ ४९ ॥

जिसके जन्मकाल में सिंहलग्न हो और सातवें स्थान में शनैश्चर हो तो वह बालक ब्राह्मण का पुत्र होकर भी म्लेच्छ हो जाता है ॥ ४९ ॥

चन्द्रमा से मृत्युयोग ।

सुतमदननवान्त्यरन्ध्रलग्ने-
ष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः ।
भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यै-
र्यदि बलिभिर्न विलोकितो युतो वा ॥५०॥

जिसके जन्मकाल में पाँचवें, सातवें, नवें, बारहवें, आठवें अथवा लग्न में पापग्रहयुक्त चन्द्रमा हो और उसको बलवान् शुक्र, बुध और बृहस्पति; इनमें से कोई ग्रह न देखता हो अथवा इनमें से कोई चन्द्रमा के साथ भी न हो तो वह बालक मर जाता है। यदि इन स्थानों में स्थित चन्द्रमा को शुक्र आदि शुभग्रह देखते हों या युक्त हों तो वह बालक नहीं मरता है * ॥ ५० ॥

अरिष्टनिवारकयोग ।

कृष्णपक्षे दिवाजन्म शुक्लपक्षे यदा निशि ।
षष्ठाष्टमे भवेच्चन्द्रः सर्वारिष्टं निवारयेत् ॥ ५१ ॥

* "पापावुदयास्तगतौ क्रूरेण युतश्च शशी । दृष्टश्च शुभैर्न तदा मृत्युस्तु भवेदचिरात् ॥ क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः । केन्द्रेषु न शुभाश्चेत्क्षिप्रं निधनं प्रवदेत् ॥" अर्थात् लग्न और सातवें स्थान में पापग्रह हों, चन्द्रमा क्रूरग्रह के साथ में हो तथा उसको शुभग्रह नहीं देखते हों तो वह बालक शीघ्र मर जाता है। चन्द्रमा क्षीण होकर बारहवें स्थान में हो और पापग्रह लग्न तथा आठवें स्थान में हो और केन्द्र में कोई शुभग्रह न हो तो वह बालक शीघ्र मर जाता है।

कृष्णपक्ष में दिन को जन्म होवे और शुक्लपक्ष में रात्रि के समय जन्म हो तथा छठे और आठवें स्थान में चन्द्रमा हो तो संपूर्ण अरिष्टों को दूर कर देता है ॥ ५१ ॥

मृत्युयोग ।

चन्द्राष्टमं च धरणीसुतसप्तमं च
राहुर्नवं च शनिजन्म गुरुस्तृतीये ।
अर्कस्तु पञ्च भृगुषष्ठ बुधश्चतुर्थे
जातो न जीवति नरः प्रवदन्ति सन्तः ॥ ५२ ॥

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा आठवें, मंगल सातवें, राहु नवें, शनि लग्न में, बृहस्पति तीसरे, सूर्य पाँचवें, शुक्र छठे और बुध चौथे स्थान में हो तो वह बालक नहीं जीता है। ऐसा सज्जन लोग कहते हैं ॥ ५२ ॥

कुलदीपकयोग ।

मूर्तौ शुक्रबुधौ यस्य केन्द्रे चैव बृहस्पतिः ।
दशमोऽङ्गारको यस्य स ज्ञेयः कुलदीपकः ॥ ५३ ॥

जिसके जन्मलग्न में शुक्र और बुध हों, केन्द्र १ । ४ । ७ । १० स्थान में बृहस्पति हो और दशवें स्थान में मंगल हो तो वह कुलदीपक होता है अर्थात् कुल को प्रख्यात करनेवाला होता है ॥ ५३ ॥

वृथाजन्मयोग ।

लग्ने शुक्रो बुधो नैव नास्ति केन्द्रे बृहस्पतिः ।
दशमेऽङ्गारको नैव स जातः किं करिष्यति ॥ ५४ ॥

जिसके लग्न में शुक्र और बुध न हों तथा केन्द्र में बृहस्पति भी न हो और दशवें स्थान में मंगल भी न हो तो वह उत्पन्न होकर क्या करेगा अर्थात् उसका उत्पन्न होना निरर्थक है ।। ५४ ।।

पितृमातृकष्टयोग ।

षष्ठे च द्वादशे राशौ यदा पापग्रहो भवेत् ।
तदा मातृभयं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥ ५५ ॥

छठे और बारहवें स्थान में जब पापग्रह होते हैं तब माता को भय होता है और चौथे तथा दशवें स्थान में पापग्रह होते हैं तब पिता का भय होता है ।। ५५ ।।

पितृमृत्युयोग ।

लग्नस्थाने यदा सौरिः षष्ठे भवति चन्द्रमाः ।
कुजस्तु सप्तमस्थाने पिता तस्य न जीवति ॥ ५६ ॥

जिसके जन्मकाल में लग्न में शनैश्चर और छठे चन्द्रमा तथा सातवें स्थान में मंगल हो तो उसका पिता नहीं जीता है।। ५६ ।।

दशमस्थो यदा सौरिः शत्रुक्षेत्रस्थितो यदि ।
म्रियते तस्य बालस्य पिता शीघ्रं न संशयः ॥ ५७ ॥

यदि शत्रु की राशि में स्थित शनैश्चर दशवें स्थान में स्थित हो तो उस बालक का पिता शीघ्र ही मर जाता है। इसमें संशय नहीं है ।। ५७ ।।

लग्ने जीवो धने मन्दो रविर्भौमस्तथा बुधः ।
विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता ॥ ५८ ॥

जिसके जन्म-समय लग्न में बृहस्पति तथा दूसरे स्थान में शनि, सूर्य, मंगल और बुध हों तो उस बालक के विवाह-समय में उसका पिता मर जाता है ।। ५८ ।।

पुनः कुलदीपकयोग ।

सिंहलग्ने यदा भौमः पञ्चमे च निशाकरः ।
व्ययस्थाने यदा राहुःस जातः कुलदीपकः ॥ ५९ ॥

जिसके सिंह लग्न में मंगल हो, पाँचवें चन्द्रमा हो तथा बारहवें स्थान में राहु हो तो वह बालक कुल का दीपक होता है ।। ५९ ।।

प्रसिद्धियोग ।

लग्ने वा सप्तमे भौमः पञ्चमे च दिवाकरः ।
व्ययस्थाने यदा राहुर्विख्यातः स न संशयः ॥ ६० ॥

जिसके लग्न अथवा सातवें स्थान में मंगल, पाँचवें सूर्य और बारहवें स्थान में राहु हो तो वह बालक निःसन्देह विख्यात (प्रसिद्ध) पुरुष होता है ।। ६० ।।

मृत्युयोग ।

पातालस्थो यदा राहुश्चेन्दुः षष्ठाष्टमेऽपि च ।
पापदृष्टोऽपि शेषेण सद्यः प्राणहरः शिशोः ॥ ६१ ॥

जिसके चौथे स्थान में राहु हो और छठे तथा आठवें स्थान में चन्द्रमा हो और उसको पापग्रह देखते हों उस बालक का शीघ्र ही मरण हो जाता है ।। ६१ ।।

जन्मलग्ने यदा राहुः षष्ठो भवति चन्द्रमाः ।
जातो मृत्युमवाप्नोति कुदृष्ट्यां त्वपमृत्युना ॥ ६२ ॥

जिसके जन्मकाल में लग्न में राहु हो और छठे स्थान में चन्द्रमा हो तो वह बालक मर जाता है। यदि जन्मलग्न और चन्द्रमा पर ग्रहों की कुदृष्टि हो तो उस बालक की अकाल मृत्यु होती है ॥ ६२ ॥

मंत्रिआदियोग ।

त्रिभिः स्वस्थैर्भवेन्मन्त्री त्रिभिरुच्चैर्नराधिपः ।
त्रिभिर्नीचभवेद्दासस्त्रिभिरस्तंगतैर्जडः ॥ ६३ ॥

जिसके जन्मकाल में तीन ग्रह अपनी राशियों में हों तो वह बालक राजा का मंत्री होता है और तीन ग्रह अपने उच्च में बैठे हों तो वह बालक राजा होता है और जिसके तीन ग्रह नीच के होते हैं वह दास (सेवक) होता है तथा तीन ग्रह अस्त हों तो मूर्ख होता है ॥ ६३ ॥

शंकररक्षित का भी मृत्युयोग ।

जन्मलग्ने यदा भौमश्चाष्टमे च बृहस्पतिः ।
वर्षे च द्वादशेमृत्युर्यदिरक्षति शङ्करः ॥ ६४ ॥

जिसके जन्मकाल में मंगल लग्न में हो और आठवें स्थान में बृहस्पति हो तो शंकर भी उस बालक की रक्षा करें तो भी वह बारहवें वर्ष में मर जाता है ॥ ६४ ॥

देवरक्षित का मृत्युयोग ।

शनिक्षेत्रे यदा सूर्यो भानुक्षेत्रे यदा शनिः ।
वर्षे च द्वादशे मृत्युर्देवो वै रक्षिता यदि ॥ ६५ ॥

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर की राशि में सूर्य हो और सूर्य की राशि में शनैश्चर हो तो वह बालक बारहवें वर्ष में मर जाता है । चाहे देवता भी रक्षा क्यों न करता हो ॥ ६५ ॥

चतुर्थवर्ष में मृत्युयोग ।

षष्ठाष्टमस्तथा मूर्तौ जन्मकाले यदा बुधः ।
चतुर्थवर्षे मृत्युश्च यदि रक्षति शंकरः ॥ ६६ ॥

जिसके जन्मकाल में छठे, आठवें तथा लग्न में बुध हो तो शिवजी के रक्षा करने पर भी चौथे वर्ष में उस बालक की मृत्यु हो जाती है ॥ ६६ ॥

अष्टमवर्ष में मृत्युयोग ।

भौमक्षेत्रे यदा जीवः षष्ठाष्टासु च चन्द्रमाः ।
वर्षेऽष्टमेऽपि मृत्युर्वै ईश्वरो रक्षिता यदि ॥ ६७ ॥

जिसके जन्मकाल में मंगल की राशि (मेष-वृश्चिक) में बृहस्पति हो और छठे तथा आठवें चन्द्रमा हो तो ईश्वर भी रक्षा करनेवाले हों तो भी आठवें वर्ष में वह बालक मर जाता है ॥ ६७ ॥

षोडशवर्ष में मृत्युयोग ।

दशमोऽपि यदा राहुर्जन्मलग्ने यदा भवेत् ।
वर्षे तु षोडशे ज्ञेयो बुधैर्मृत्युर्नरस्य च ॥ ६८ ॥

जिसके जन्म-समय दशवें स्थान में राहु हो तो सोलहवें वर्ष में उसकी मृत्यु हो जाती है। ऐसा पंडितों को जानना चाहिए ॥ ६८ ॥

भ्रातृनाशयोग ।

अग्रजातं रविर्हन्ति पृष्ठजातं शनैश्चरः ।
जातं जातं कुजो हन्ति सहजस्थो भवेद्यदि ॥ ६९ ॥

जिसके जन्मकाल में तीसरे स्थान में सूर्य हो तो वह उत्पन्न हुए बालक से पहले पैदा हुए बालक को मारता है । यदि तीसरे स्थान में शनैश्चर हो तो वह पीछे उत्पन्न होनेवाले (छोटे) बालक को मारता है । जो मंगल तीसरे स्थान में हो तो उस बालक के पीठ पर (पीछे) जितने बालक उत्पन्न होते हैं उनको वह नष्ट कर देता है ॥ ६९ ॥

ग्रहराशि से पितृ आदि के वृत्तान्त का ज्ञान ।

इनाङ्कार्क्षात्तातः शशिसुखगृहान्मातृकथितः
कुजाद्भ्रातृस्थानात्सहजइनपुत्राष्टमगृहात् ।
मृतिर्ज्ञात्षष्ठे स्याद्रुज इतिक्रमान्मातुलमपि
गुरौ पुत्रात्पुत्रोसितसदनभाद्दारफलजम् ॥ ७० ॥

सूर्य जहाँ बैठा हो उससे नवें स्थान में जो भाव हो उससे पिता का शुभाशुभ कहना । चन्द्रमा से चौथे भाव द्वारा माता का शुभाशुभ कहना । मंगल से तीसरे स्थान द्वारा भाइयों का, शनि से अष्टमभाव द्वारा मृत्यु का, बुध से छठे भाव द्वारा रोग और मामा का, बृहस्पति से पंचम भाव द्वारा पुत्र का और शुक्र से सप्तमभाव द्वारा स्त्री का शुभाशुभ विचार करना चाहिए ॥ ७० ॥

भावहानि-वृद्धियोग ।

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा
सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः ।
पापैरेवं तस्य भावस्य हानि-
निर्देष्टव्या पृच्छतो जन्मतो वा ॥ ७१ ॥

जो जो भाव अपने स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो या शुभग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो उस-उस भाव की वृद्धि होता है तथा जो भाव अपने स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट न हो और उसको पापग्रह देखते हों तो उसकी हानि कहना चाहिए । यह जन्मलग्न से अथवा प्रश्नलग्न से विचार करना चाहिए ॥ ७१ ॥

यद्भावनाथो रिपुरन्ध्ररिष्फे
दुःस्थानपो यद्भवनस्थितो वा ।
तद्भावनाशं कथयन्ति तज्ज्ञाः
शुभेक्षिते तद्भवनस्य सौख्यम् ॥ ७२ ॥

जिस भाव का स्वामी छठे, आठवें और बारहवें स्थान में स्थित हो तथा छठे, आठवें और बारहवें स्थान का स्वामी जिस भाव में स्थित हो उस भाव की हानि होती है । और जो वह भाव शुभग्रहों से देखा जाता हो तो उस भाव की वृद्धि होती है। ऐसा ज्योतिर्विद् लोग कहते हैं ॥ ७२ ॥

राशियों का वर्ण।

मेषे रक्तं वृषे श्वेतं मिथुने नीलवर्णकम्।
कर्कटे श्वेतरक्तं च सिंहे धूम्रं च पाण्डुरम् ॥ ७३ ॥
कन्या विचित्रवर्णं च तुले धूम्रं प्रकीर्तितम्।
पिशङ्गो वृश्चिके ज्ञेयः पिङ्गलो धनुषस्तथा ॥ ७४ ॥
कर्बुरो मकरे ज्ञेयो बभ्रु वर्णं घटे वदेत्।
मीनवर्णं झषे ज्ञेयो राशिवर्णान्वदेद्बुधः ॥ ७५ ॥

मेष का लालवर्ण, वृष का सफेदवर्ण, मिथुन का नीलवर्ण, कर्क का सफेद और लालवर्ण, सिंह का धुमेला और पाण्डुवर्ण, कन्या का अनेक रंग का, तुला का धूम्रवर्ण, वृश्चिक का पीला (सुवर्ण-सदृश), धनु का पीला, मकर का कबुरा (सफेद और काला), कुम्भ का नेवला का सा वर्ण और मीन का मछली का सा वर्ण होता है ॥ ७३-७५ ॥

राशिस्वामी।

मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाधिपः।
बुधः कन्यामिथुनयोः प्रोक्तः कर्कस्यचन्द्रमाः ॥ ७६ ॥
स्यान्मीनधनुषोर्जीवः शनिर्मकरकुम्भयोः।
सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कीथितो गणकोत्तमैः ॥ ७७ ॥

मेष और वृश्चिक का स्वामी मंगल, वृष और तुला का स्वामी शुक्र, कन्या और मिथुन का स्वामी बुध, कर्क का स्वामी चन्द्रमा, मीन और धनु का स्वामी बृहस्पति, मकर और कुंभ का स्वामी शनैश्चर और सिंह का स्वामी सूर्य होता है। यह ज्योतिर्विदों ने कहा है ॥ ७६-७७ ॥

दिन-रात्रिबली तथा पृष्ठोदयादिलग्नज्ञान।

गोजाश्विककर्किमिथुनाः समृगा निशाख्याः
पृष्ठोदया विमिथुनाः कथितास्त एव।
शीर्षोदया दिनबलाश्च भवन्ति शेषा
लग्नं समेत्युभयतः पृथुरोमयुग्मम् ॥ ७८ ॥

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धन और मकर ये राशियाँ रात्रि में बलवती हैं और मिथुनरहित ये ही राशियाँ पृष्ठोदय भी कही हैं। अन्य राशियाँ दिन में बलवती और मिथुन सहित सब शीर्षोदय हैं। मीन राशि की उभयोदय संज्ञा तथा दिन-रात्रि में बलवती है ॥ ७८ ॥

पृष्ठोदयादिचक्र।

मेष	वृष	कर्क	धनुः	मकर	रात्रिबली पृष्ठोदय
सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	कुंभ	दिनबली शीर्षोदय
		मिथुन			रात्रिबली शीर्षोदय
		मीन			दिनरात्रिबली उभयोदय

क्रूर-सौम्य, पुरुष-स्त्री, चरादिराशि, दिगीश, होरा और द्रेष्काण का ज्ञान ।

क्रूरः सौम्यः पुरुषवनिते ते चरागद्विदेहाः
प्रागादीशाः क्रियवृषनृयुक्कर्कटाः सत्रिकोणाः ।
मार्तण्डेन्द्वोरयुजि समभे चन्द्रभान्वोश्च होरे
द्रेष्काणाः स्युः स्वभवनसुतत्रित्रिकोणाधिपानाम् ७९

मेष आदि राशियाँ क्रम से क्रूर-सौम्य; पुरुष-स्त्री; चर, स्थिर और द्विस्वभावसंज्ञक होती हैं। जैसे—मेष क्रूर, पुरुष और चर-संज्ञक है। वृष सौम्य, स्त्री और स्थिरसंज्ञक है। इसी प्रकार मिथुन क्रूर, पुरुष और द्विस्वभाव है। इसी प्रकार कर्कादि राशियों का जानना चक्र में स्पष्ट लिखे हैं।

क्रूरादिबोधकचक्र ।

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशि
क्रूर	सौ०	क्रूर	सौ०	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौ०	क्रूर	सौ०	क्रूर	सौम्य	संज्ञा
पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	संज्ञा
चर	स्थिर	द्विस्व.	चर	स्थिर	द्विस्व.	चर	स्थिर	द्विस्व.	चर	स्थिर	द्विस्व.	संज्ञा

मेष, वृष, मिथुन और कर्क ये राशियाँ अपनी त्रिकोण राशियों (नवम-पंचम) के सहित क्रम से पूर्वादि चारों दिशाओं के स्वामी हैं। अर्थात् मेष, सिंह और धन पूर्व दिशा के; वृष, कन्या और मकर दक्षिण दिशा के; मिथुन, तुला और कुंभ पश्चिम दिशा के और कर्क, वृश्चिक तथा मीन उत्तर दिशा के स्वामी हैं।

दिगीशचक्र ।

मेष	सिंह	धन	पूर्व दिशा के स्वामी
वृष	कन्या	मकर	दक्षिण दिशा के स्वामी
मिथुन	तुला	कुंभ	पश्चिम दिशा के स्वामी
कर्क	वृश्चिक	मीन	उत्तर दिशा के स्वामी

विषम राशि में सूर्य और चन्द्रमा का तथा सम राशि में चन्द्रमा और सूर्य का होरा होता है। एक राशि में पन्द्रह-पन्द्रह अंश के दो होरा होते हैं। जैसे विषम राशि मेष में पहले १५ अंश तक सूर्य का होरा और अन्त के १५ अंशों में चन्द्रमा का होरा होता है। इसी प्रकार सम राशि वृष में पहले १५ अंश तक चन्द्रमा का और अन्त के १५ अंशों में सूर्य का होरा होता है। विशेष चक्र में देखना चाहिए।

होराचक्र ।

राशि	मेष	वृष	मि०	कर्क	सिंह	कं०	तुला	वृ०	धनु	मकर	कुंभ	मीन
ग्रह	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चन्द्र
अंश	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
ग्रह	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य	चंद्र	सूर्य
अंश	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५

एक राशि में दश-दश अंश के ३ द्रेष्काण होते हैं। पहला द्रेष्काण अपनी राशि के स्वामी का दूसरा द्रेष्काण अपनी राशि से

पाँचवीं राशि के स्वामी का तथा तीसरा द्रेष्काण अपनी राशि से नवीं राशि के स्वामी का होता है। यथा—मेष राशि में पहला द्रेष्काण मेष के स्वामी मंगल का, दूसरा द्रेष्काण सिंह के स्वामी सूर्य का और तीसरा द्रेष्काण धन के स्वामी बृहस्पति का होता है। इसी प्रकार चक्र से सबका द्रेष्काण जानना ॥ ७९ ॥

द्रेष्काणचक्र।

राशि	मेष	बृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कं०	तुला	बृ०	ध०	म०	कुं०	मीन
राशि	मेष	बृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कं०	तुला	बृ०	धन	मकर	कुंभ	मीन
ग्रह	मं०	शुक्र	बुध	चन्द्र	सूर्य	बुध	शुक्र	मं०	गुरु	शनि	शनि	गुरु
अंश	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
राशि	सिंह	कं०	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुंभ	मीन	मेष	बृष	मि०	कर्क
ग्रह	सूर्य	बुध	शुक्र	मंगल	गुरु	शनि	शनि	गुरु	मं०	शुक्र	बुध	चन्द्र
अंश	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०
राशि	धन	मकर	कुंभ	मीन	मेष	बृष	मि०	कर्क	सिंह	कं०	तुला	बृ०
ग्रह	गुरु	शनि	शनि	गुरु	मं०	शुक्र	बुध	चंद्र	सूर्य	बुध	शुक्र	मंगल
अंश	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०

केन्द्रादि तथा कीटादिज्ञान।

कण्टककेन्द्रचतुष्टयसंज्ञाः
सप्तमलग्नचतुर्थखभानाम्।

तेषु यथाभिहितेषु बलाढ्याः
कीटनराम्बुचराः पशवश्च ॥ ८० ॥

सप्तम, लग्न, चौथा और दशवाँ इन भावों की कण्टक, केन्द्र और चतुष्टयसंज्ञा है। इन चारों स्थानों में क्रम से कीटराशि, नरराशि, जलचरराशि और पशुराशियाँ बलवती होती हैं। जैसे—कीटराशि (वृश्चिक) सप्तम स्थान में बलवती होती है। मनुष्यराशि (मिथुन तुला, कन्या, कुंभ और धन का पूर्वार्ध) लग्न में बलवती, जलचर राशि (कर्क, मीन और मकर का उत्तरार्ध) चौथे स्थान में बलवती और पशुराशि (मेष, सिंह, वृष, धन का पूर्वार्ध और मकर का उत्तरार्ध) दशवें स्थान में बलवती होती हैं ॥ ८० ॥

वर्णास्ताम्रसितातिरक्तहरितव्यापीतचित्रासिता
वह्नयम्ब्वग्निजकेशवेन्द्रशचिकाः सूर्यादिनाथाःक्रमात्।
प्रागाद्या रविशुक्रलोहिततमः सौरेन्दुवित्सूरयः
क्षीणेन्द्वर्कमहीसुतार्कतनयाः पापा बुधस्तैर्युतः ॥ ८१ ॥

वर्णेशग्रह।

ताम्रवर्ण का स्वामी सूर्य, सफेदवर्ण का चन्द्रमा, गहरे लालवर्ण का मंगल, हरेवर्ण का बुध, पीलेवर्ण का बृहस्पति, चित्र-विचित्र-वर्ण का शुक्र और कृष्णवर्ण का स्वामी शनैश्चर होता है।

ग्रहेश।

सूर्य का अग्नि, चन्द्रमा का जल, मंगल का स्वामिकार्त्तिकेय, बुध का विष्णु, बृहस्पति का इन्द्र, शुक्र का इन्द्राणी और शनैश्चर का ब्रह्मा स्वामी होता है।

दिगीश ।

पूर्व आदि दिशाओं के क्रम से सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति ये ग्रह स्वामी हैं । पूर्व दिशा का सूर्य, अग्निकोण का शुक्र, दक्षिण का मंगल, नैर्ऋत्यकोण का राहु, पश्चिम का शनि, वायव्यकोण का चन्द्रमा, उत्तर का बुध और ईशानकोण का बृहस्पति स्वामी है ।

क्षीणचन्द्रमा, सूर्य, मंगल तथा शनैश्चर ये पापीग्रह हैं । इनके साथ में होने से बुध भी पापी होता है ।। ८१ ।।

वर्णेशादिचक्र ।

सूर्य०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	राहु	ग्रह
लाल	श्वेत	अतिलाल	हरा	पीला	चित्र	कृष्ण	०	वर्ण
अग्नि	जल	कार्त्तिकेय	विष्णु	इन्द्र	इन्द्राणी	ब्रह्मा	०	ग्रहस्वा०
पूर्व	वाय०	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैर्ऋत्य	ग्रहदिशा

त्रिदशत्रिकोणचतुरस्रसप्तमा-
न्यवलोकयन्ति चरणाभिवृद्धितः ।
रविजामरेज्यरुधिराः परे च ये
क्रमशो भवन्ति किल वीक्षणेऽधिकाः ॥ ८२ ॥

तीसरे और दशवें, नवें और पाँचवें, चौथे और आठवें तथा सातवें स्थान को सूर्यादि ग्रह चरणाभिवृद्धि से अर्थात् क्रम से एक

पाद, दो पाद, त्रिपाद और पूर्ण दृष्टि से देखते हैं । उपर्युक्त स्थानों को शनि, बृहस्पति, मंगल तथा इनके अतिरिक्त सब ग्रह क्रम से पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। अर्थात् तीसरे और दशवें स्थान को शनैश्चर पूर्ण दृष्टि से और सब ग्रह एकपाद दृष्टि से देखते हैं। पाँचवें तथा नवें स्थान को बृहस्पति पूर्ण दृष्टि से और सब ग्रह आधी दृष्टि से देखते हैं। चौथे और आठवें स्थान को मंगल पूर्ण दृष्टि से और सब ग्रह पौन दृष्टि से देखते हैं । अन्य सब ग्रह सप्तम भाव को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ।। ८२ ।।

दृष्टिचक्रम् ।

३ । १० शनि पूर्ण दृष्टि अन्य १ पाद दृष्टि	९ । ५ बृहस्पति पूर्ण दृष्टि अन्य अर्ध दृष्टि
४ । ८ मंगल पूर्ण दृष्टि अन्य पौन दृष्टि	७ सब पूर्ण दृष्टि

अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा
झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः ।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशै-
स्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः ॥ ८३ ॥

मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन और तुला ये राशियाँ क्रम से दश, तीन, अट्ठाईस, पन्द्रह, पाँच, सत्ताईस और बीस अंशों करके सूर्यादि ग्रहों के उच्चस्थान हैं। और इन्हीं राशियों से सातवीं राशि क्रम से उक्तांशों करके सूर्यादि ग्रहों का नीच स्थान है ।। ८३ ।।

ग्रहोच्च-नीचचक्र ।

ग्रह	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	उच्च-नीच
राशि	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला	परमोच्च
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	
राशि	तुला	वृश्चि०	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष	परम नीच
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	

अथ वराहमिहिराचार्योक्तमित्रादि ।

शत्रू मन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवे-
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदौशेषाः समाःसीतगोः
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्की समौ
मित्रे सूर्यसितौबुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥ ८४॥
सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्की सुहृदौ समौ कुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी ।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्योऽरयो
ये प्रोक्ताः सुहृदस्त्रिकोणभवनात्तेऽमी मया कीर्तिताः ८५

सूर्य के शुक्र और शनैश्चर शत्रु हैं, बुध सम और शेष (चन्द्रमा मंगल और बृहस्पति) मित्र हैं। चन्द्रमा के सूर्य और बुध मित्र तथा शेष ग्रह सम हैं। मंगल के चन्द्र सूर्य और बृहस्पति मित्र हैं, बुध शत्रु है और शुक्र तथा शनि सम हैं। बृहस्पति के बुध और शुक्र शत्रु, शनि सम और अन्य ग्रह मित्र हैं। शुक्र के बुध और शनि मित्र, मंगल और बृहस्पति सम और शेष ग्रह शत्रु हैं। शनैश्चर के शुक्र और बुध मित्र, बृहस्पति सम और अन्य ग्रह शत्रु हैं। जो त्रिकोण*भवन से मित्र कहे हैं वे ही यहाँ मैंने उदाहरणरूप से कहे हैं॥ ८४-८५॥

मित्रसमारिचक्रम् ।

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	ग्रहाः
चं. मं. बृ.	सू० बु०	सू. चं.बृ०	सू० शु०	सू. चं० मं.	बु. श.	शु. बु.	मित्राणि
बु०	मं० बृ० शु० श०	शु० श०	मं. बृ. श.	श०	मं. बृ.	बृ०	समाः
श० शु०	०	बु०	चं०	बु० शु०	सू. चं.	सू. चं. मं.	शत्रव

तात्कालिकमित्रादि ।

अन्योऽन्यस्य धनव्ययायसहजव्यापारबन्धुस्थिता-
स्तत्काले सुहृदस्स्वतुङ्गभवनेऽप्येकेऽरयस्त्वन्यथा ।
द्व्य कानुक्तभपान्सुहृत्समरिपून् संचिन्त्य नैसर्गिकां-
स्तत्काले च पुनस्तु तानधिसुहृन्मित्रादिभिःकल्पयेत्

सब ग्रह अपने स्थान से दूसरे, बारहवें, ग्यारहवें, तीसरे, दशवें

१ "सत्योक्ते सुहृदस्त्रिकोणभवनात्स्वान्त्यधीधर्मपाः" इत्यादिः ।

और चौथे स्थान में स्थित ग्रह के परस्पर मित्र हैं। कोई-कोई आचार्य कहते हैं कि अपने उच्चस्थान में स्थित ग्रह भी मित्र हैं। इनके अतिरिक्तपहिले, पाँचवें, छठे, सातवें, आठवें और नवें स्थान में स्थित ग्रह शत्रु हैं। यहाँ भी उक्त, उक्तानुक्त और अनुक्त राशियों के स्वामियों की रीति से मित्र, सम और शत्रुओं का विचार करके अधिमित्र और अधिशत्रु आदि की कल्पना करना चाहिए। उसकी यह रीति है कि जो ग्रह नैसर्गिक मित्र तथा तात्कालिक मित्र है वह अधिमित्र कहाता है और जो नैसर्गिक सम तथा तात्कालिक शत्रु अथवा मित्र है तो वह तात्कालिक शत्रु अथवा मित्र कहाता है और जो नैसर्गिक शत्रु तथा तात्कालिक शत्रु है वह अधिशत्रु कहा जाता है ॥ ८६ ॥

तात्कालिकमित्रशत्रुचक्र।

२	१२	११	३	१०	४	उच्च	स्थित मित्र
१	५	७	८	९	६	०	स्थित शत्रु

इति श्रीपण्डितमनीलालात्मजखूबचन्द-
शर्मगौड़कृतसुबोधिनीटीकासहितं
लग्नजातकं समाप्तम्।

———

ज्योतिष-संबंधी पुस्तकें

कर्म विपाक संहिता	३०)
चमत्कार चिन्तामणि	६)
प्रश्न प्रकाश	४)
बृहज्योति:सार सटीक सजिल्द	६५)
बृहज्जातक सटीक स्टिफ कवर	३०)
लग्न चन्द्रिका	३०)
सर्वतोभद्र चक्रम्	१९)
मुहूर्त चिन्तामणि	३५)
फल प्रकाश	४)

मैनेजर—तेजकुमार बुकडिपो (प्रा०) लिमिटेड,

पो० बाक्स ८५, १—त्रिलोकनाथ रोड,

लखनऊ—२२६००१